International Journal of Web of Multidisciplinary Studies
(Peer-Reviewed, Open Access, Fully Refereed International Journal)
website: *http://ijwos.com*
Vol.02 No.12.
OPEN ACCESS
E-ISSN : 3049-2424
DOI: https://doi.org/10.71366/ijwos

रीतिकालीन कविता में नायक-चेतना और आदर्श नायक का स्वरूप

डॉ. आनंद कुमार[1]
[1] अतिथि व्याख्याता, हिन्दी विभाग, बी. एन. कॉलेज, भागलपुर, टी. एम. बी. यू., भागलपुर.

Article Info

Article History:

Published:30 Dec 2025

Publication Issue:
Volume 2, Issue 12
December-2025

Page Number:
879-885

Corresponding Author:
डॉ. आनंद कुमार

Abstract:

रीतिकाल (1600–1850 ई.) हिंदी साहित्य का वह समृद्ध एवं उत्कर्षपूर्ण अध्याय है जिसमें काव्य–रचना का केंद्रबिंदु मानवीय जीवन का लौकिक सौंदर्य, श्रृंगारिक अनुभव, प्रेम–संवेदना और कलात्मक अभिव्यक्ति बन जाता है। यह वह कालखंड है जिसमें काव्य केवल भावनाओं का माध्यम नहीं, बल्कि सौंदर्यशास्त्रीय संरचना, कलात्मक शैली, अलंकृत भाषा और रस–सिद्धांतों का प्रयोग–क्षेत्र बनकर उभरता है। भक्तिकाल जहाँ ईश्वर–भक्ति, साधना, भक्ति–माधुर्य और आध्यात्मिक समर्पण पर आधारित था, वहीं रीतिकाल का साहित्य देह–प्रधान प्रेम, रसमय जीवन–दर्शन, लौकिक सौंदर्य और मानवीय संबंधों की अनुभूतियों को केंद्र में रखता है। रीतिकाल में राजाश्रय प्राप्त कवियों की परंपरा अत्यंत सशक्त रही, जिसके फलस्वरूप काव्य–सृजन दरबारी संस्कृति से प्रभावित हुआ। दरबारों में संगीत, नृत्य, कला, विलासिता, श्रृंगार और भव्यता का प्रभाव साहित्य में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। इस काव्य परंपरा में नायक–नायिका, श्रृंगार–रस, अलंकार, नायिका–भेद, रति–व्यवहार, समय–संयोग और वियोग–स्थितियाँ, प्रेम के संकेत एवं नख–शिख वर्णन जैसे उपादानों ने सौंदर्य का अत्यंत उच्च स्तर निर्मित किया।[1]

इसी काव्य–परंपरा में नायक–चेतना एक केंद्रीय स्थान ग्रहण करती है। रीतिकालीन कविता का नायक केवल प्रेम–नायक ही नहीं होता, बल्कि वह एक आदर्श व्यक्तित्व, सांस्कृतिक जीवन–मूल्यों का प्रतिनिधि, सामाजिक गरिमा और राजसी वैभव का प्रतीक बनकर उपस्थित होता है। वह सौंदर्य, प्रेम, शौर्य, प्रतिष्ठा और मर्यादा जैसे गुणों का समन्वय है। उसके व्यक्तित्व का लक्ष्य केवल प्रेम–साधना या नायिका–प्राप्ति नहीं, बल्कि रसमय जीवन के कलात्मक अनुभवों का आनंद है। रीतिकाल का नायक भावनात्मक रूप से अत्यंत संवेदनशील, कलाप्रिय और श्रृंगार–मर्मज्ञ है। वह प्रकृति, स्त्री–सौंदर्य, कला, प्रेम और सामाजिक आदर्शों के समन्वय से निर्मित व्यक्तित्व है। इस प्रकार रीतिकाल में नायक–चेतना केवल साहित्यिक अवधारणा नहीं, बल्कि समकालीन समाज और संस्कृति का जीवंत दस्तावेज प्रस्तुत करती है। अतः रीतिकालीन काव्य में नायक का स्वरूप केवल अलंकारिक और मौलिक कृति के रूप में नहीं अपितु सामाजिक और सौंदर्यात्मक आदर्श की मूर्ति बनकर उभरता है। इस नायक के माध्यम से उस समय के सामंती समाज, राजदरबारों, सांस्कृतिक प्रसंगों और मानव–जीवन की लौकिक संवेदनाओं का सशक्त अभिव्यक्ति–रूप दिखाई देता है। यही कारण है कि रीतिकालीन साहित्य के अध्ययन में नायक–चेतना और आदर्श नायक का स्वरूप अत्यंत महत्त्वपूर्ण और शोधयोग्य विषय है, क्योंकि इसके माध्यम से न केवल काव्य–रचना की विशिष्टता ज्ञात होती है, बल्कि उस दौर के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश और कला–दृष्टि का भी गहन परिचय मिलता है।[2]

Keywords: नायक–चेतना, आदर्श नायक, श्रृंगार–रस, सौंदर्य–बोध, दरबारी संस्कृति, कलाप्रेम, कला और संगीत, प्रेम और श्रृंगार।

रीतिकालीन कविता में नायक–चेतना का स्वरूप अत्यंत व्यापक, बहुआयामी और सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। रीतिकाल का नायक केवल प्रेम और श्रृंगार–रस का उपासक नहीं है, बल्कि वह अपने समय की सामंती सभ्यता, राजदरबारी वातावरण, सांस्कृतिक वैभव और सौंदर्य–प्रधान जीवन– दृष्टि का सजीव प्रतिनिधि बनकर उपस्थित होता है। उसकी चेतना प्रेम, सौंदर्य, सम्मान, प्रतिष्ठा, शौर्य और रसमय जीवनानुभूति से निर्मित होती है, जहाँ प्रेम केवल व्यक्तिगत या क्षणिक अनुभूति न होकर कला, काव्य और भावनात्मक परिष्कार का माध्यम बन जाता है। रीतिकालीन नायक प्रेम को अनुशासन, मर्यादा और सौंदर्यबोध के साथ अनुभव करता है, जिससे प्रेम एक उच्च कोटि की सांस्कृतिक और कलात्मक साधना के रूप में प्रतिष्ठित होता है। उसकी प्रेम–चेतना में संकेत, प्रतीक्षा, मिलन–वियोग, अनुराग, मान–मनुहार और भावनात्मक सूक्ष्मता का सुंदर समन्वय दिखाई देता है, जो काव्य को रसात्मक गहराई प्रदान करता है। नायक–चेतना के केंद्र में सौंदर्य–बोध और रसास्वादन की प्रवृत्ति प्रमुख रूप से विद्यमान रहती है।[3] रीतिकाल का नायक सौंदर्य को केवल शारीरिक आकर्षण तक सीमित नहीं रखता, बल्कि उसमें मनोवैज्ञानिक संवेदनशीलता,

Copyright © 2025 The Author(s) : This is an open access article under the CC BY license (http://creativecommons.org/licenses/by-nc/4.0/)

भावमाधुर्य, शिष्टाचार, कला–प्रियता और सांस्कृतिक परिष्कार को भी समाहित करता है। वह नायिका के सौंदर्य, उसके भाव–संकेतों, उसकी लज्जा, कोमलता और मानसिक स्थिति को समझने वाला सहृदय और संवेदनशील पुरुष होता है। नायिका के साथ उसके प्रेम–संबंध विनम्रता, आदर, समर्पण और मर्यादा पर आधारित होते हैं, जिससे प्रेम केवल भोगात्मक न रहकर सांस्कृतिक और सौंदर्यात्मक आदर्श के रूप में उभरता है। रीतिकालीन नायक प्रेम–व्यवहार में चतुर, रसिक और भावनात्मक रूप से परिपक्व होता है, जो प्रेम को कलात्मक ढंग से जीता और अभिव्यक्त करता है। इसके साथ–साथ रीतिकालीन नायक की चेतना में शौर्य, प्रतिष्ठा और सामाजिक सम्मान का तत्व भी समान रूप से प्रभावी रहता है।[4] वह केवल प्रेम–भूमि का नायक नहीं, बल्कि युद्ध–भूमि में भी वीरता, पराक्रम और साहस का प्रतीक माना जाता है। राज्य–रक्षक, कुल–मर्यादा का पालन करने वाला और सामंती आदर्शों का प्रतिनिधि होने के कारण उसकी प्रतिष्ठा समाज में उच्च स्थान रखती है। प्रेम और वीरता, कोमलता और पराक्रम, रसिकता और मर्यादा इन सभी का संतुलित समन्वय रीतिकालीन नायक के व्यक्तित्व को विशिष्ट बनाता है। वह एक ओर प्रेम में कोमल, संवेदनशील और भावुक दिखाई देता है, तो दूसरी ओर अपने सम्मान, स्वाभिमान और सामाजिक दायित्वों के प्रति सजग और दृढ़ भी रहता है।इस प्रकार रीतिकालीन कविता में नायक–चेतना केवल एक साहित्यिक कल्पना नहीं, बल्कि उस युग की सामाजिक–सांस्कृतिक मानसिकता, दरबारी जीवन–शैली और सौंदर्य–प्रधान जीवन–मूल्यों का प्रतिबिंब है। नायक के माध्यम से उस समय के सामंती समाज की प्रतिष्ठा–चेतना, कला–प्रियता, प्रेम–दृष्टि और जीवन–रस का सशक्त चित्र सामने आता है। यही कारण है कि रीतिकाल का नायक हिंदी साहित्य में केवल श्रृंगार–रस का संवाहक न होकर एक आदर्श सांस्कृतिक व्यक्तित्व, रसमय जीवन–दर्शन का प्रतिनिधि और अपने युग की चेतना का प्रतीक बनकर उभरता है।[5]

रीतिकालीन नायक की मानसिक संरचना अत्यंत सूक्ष्म, संतुलित और बहुआयामी रूप में विकसित दिखाई देती है। उसकी चेतना में केवल रसमयता और भोग–प्रधान प्रवृत्ति ही नहीं, बल्कि गहराई, संयम, आत्मनियंत्रण और मानवीय समझ भी समान रूप से विद्यमान रहती है। यद्यपि वह राजदरबारी और सामंती परिवेश में जीवन व्यतीत करता है, तथापि उसका आचरण आदर्श, मर्यादित और सामाजिक प्रतिष्ठा से युक्त होता है। वह अपने व्यवहार में नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक शिष्टाचार का पालन करता हुआ दिखाई देता है, जिससे उसका व्यक्तित्व केवल विलासिता का प्रतीक न रहकर एक संतुलित और परिष्कृत चरित्र के रूप में उभरता है।[6] उसका व्यक्तित्व अनेक स्तरों पर विकसित होता है कभी वह हास्य, विनोद, चातुरी और कलात्मक अभिव्यक्ति का साधक बनकर प्रेम–जीवन को रसमय बनाता है, तो कभी गंभीर, दायित्वनिष्ठ और चरित्र–प्रधान पुरुष के रूप में सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन करता हुआ दिखाई देता है। इसी बहुआयामी व्यक्तित्व के कारण रीतिकालीन नायक की चेतना को समझना उस युग के समाज, संस्कृति और सौंदर्य–दृष्टि को समझने की कुंजी माना जाता है। वास्तव में रीतिकाल का नायक केवल एक प्रेमी या श्रृंगारी पात्र नहीं, बल्कि अपने युग की चेतना का प्रतीक, जीवन–मूल्यों का संवाहक, कला–संवेदनशीलता का प्रतिनिधि और सामाजिक मूल्यबोध का संरक्षक है। उसकी चेतना में जीवन का सौंदर्य, प्रेम की माधुर्यता, सामाजिक प्रतिष्ठा, शौर्य–परंपरा और रसमय भाव–संसार का ऐसा अद्भुत और संतुलित समन्वय मिलता है, जो उसे हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट और स्थायी स्थान प्रदान करता है।[7]

रीतिकालीन काव्य में प्रेम–प्रधान चेतना नायक के व्यक्तित्व का मूल और केंद्रीय आधार मानी जाती है। रीतिकाल का नायक प्रेम को जीवन का सर्वोच्च मूल्य स्वीकार करता है और उसकी समस्त मानसिक सक्रियता प्रेमाभिव्यक्ति, रस–संवाद और भावात्मक अनुभूति के इर्द–गिर्द केंद्रित रहती है। जहाँ भक्तिकाल में प्रेम भक्ति और आध्यात्मिक अनुभूति का साधन था, वहीं रीतिकाल में प्रेम लौकिक, मानवीय, रसमय और सौंदर्य–प्रधान स्वरूप में विकसित होता है। नायक प्रेम को शरीर और मन, संवेदना और सौंदर्य, मिलन और वियोग, आनंद और वेदना के स्वाभाविक और सजीव सम्मिश्रण के रूप में अनुभव करता है। उसकी चेतना में प्रेम केवल भावनात्मक आकर्षण या शारीरिक आसक्ति तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह एक उच्च कोटि की कलात्मक प्रक्रिया बन जाता है, जिसमें संकेत, प्रतीक्षा, उत्कंठा, नायिका के साथ भावात्मक समन्वय और रसमय अनुभूति के अनेक सूक्ष्म पक्ष समाहित होते हैं। इसी प्रेम–प्रधान चेतना के माध्यम से रीतिकालीन नायक काव्य को भावनात्मक गहराई, सौंदर्यात्मक परिष्कार और रसात्मक पूर्णता प्रदान करता है तथा प्रेम को जीवन और कला की सर्वोच्च साधना के रूप में प्रतिष्ठित करता है।[8]

रीतिकालीन काव्य में प्रेम के संचालन में नायक को अत्यंत कौशलयुक्त, संवेदनशील और भावनात्मक रूप से परिपक्व व्यक्तित्व के रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह प्रेम के सूक्ष्म संकेतों, रीति–नीति, व्यवहार–शैली और सांस्कृतिक मर्यादाओं का गहरा पारखी माना जाता है। उसकी प्रेम–यात्रा एक सीधी या एकरैखिक प्रक्रिया न होकर भावनाओं के विविध स्तरों से होकर गुजरती है, जिसमें कोमलता, सौंदर्य, आकर्षण, स्नेह, अनुरक्ति, छेड़–छाड़, रूठना–मनाना, अंतराल, वियोग–पीड़ा और अंततः मिलन–आनंद जैसी अनेक भावगत अवस्थाएँ क्रमशः विकसित होती हैं। रीतिकाल के कवियों ने नायक को प्रेम के माध्यम से जीवन की रसपूर्ण दृष्टि और सौंदर्य–साधना का प्रतीक बनाया है, जहाँ प्रेम केवल व्यक्तिगत अनुभूति न रहकर कला और काव्य का प्राणतत्त्व बन जाता है। इसी कारण नायक को कला–प्रिय, रस–प्रेमी, संगीत–नृत्य का अनुरागी तथा नारी–सौंदर्य का सूक्ष्म पारखी रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। बिहारी की सतसई, देव के भ्रमरगीतसार और केशवदास की रसिक–प्रिया में प्रेम की यही कलात्मक, संयत और रसमय चेतना अत्यंत सजीव रूप में अभिव्यक्त हुई है, जहाँ प्रेम नायक की आत्मा और उसकी संपूर्ण पहचान का केंद्रीय आधार बनकर सामने आता है।[9] रीतिकालीन नायक की चेतना में सौंदर्य सर्वोपरि स्थान रखता है और वह स्वभावतः सौंदर्योपासक, रसिक तथा कलात्मक संवेदनाओं से परिपूर्ण व्यक्तित्व के रूप में उभरता है। रीतिकाल में सौंदर्य की अवधारणा केवल बाह्य रूप–रंग या शारीरिक लावण्य तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह व्यक्तित्व की गरिमा, संवेदनात्मक गहनता, शिष्टाचार, सांस्कृतिक संस्कार, भावात्मक विनम्रता और

कलात्मक जीवंतता के समन्वित रूप में विकसित होती है। नायक न केवल नायिका की शारीरिक आकर्षण–युक्त विशेषताओं – जैसे मधुर हास्य, लज्जा, नैनों की भाषा, चाल की लय, मुख की मोहकता और केशों की छवि का प्रशंसक होता है, बल्कि उसके भाव–संकेतों, मनोवैज्ञानिक स्थिति, करुणा, प्रेम की तीव्रता और मानसिक गहराई का भी सूक्ष्म मूल्यांकन करता है। उसकी सौंदर्य–दृष्टि वस्त्राभूषण, श्रृंगार–सामग्री, उत्सवी और दरबारी वातावरण, संगीत–नृत्य, प्रकृति के रमणीय रूपों तथा परंपरागत कला–संस्कृति तक विस्तृत रहती है। इस प्रकार रीतिकालीन नायक के लिए सौंदर्य केवल देखने या भोगने की वस्तु नहीं, बल्कि जीवन को रसमय, सुसंस्कृत और कलात्मक बनाने वाली एक गहन चेतना है, जो उसकी संपूर्ण व्यक्तित्व–संरचना और काव्यात्मक अभिव्यक्ति को दिशा प्रदान करती है।[10]

रीतिकालीन नायक सौंदर्य को मात्र देखने योग्य दृश्य या क्षणिक शारीरिक आकर्षण का साधन नहीं मानता, बल्कि उसे जीवन–साधना, भावनात्मक परिष्कार और सांस्कृतिक अनुभव की एक सतत तथा रसमय प्रक्रिया के रूप में आत्मसात करता है। उसके लिए सौंदर्य केवल बाह्य रूप तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह मन, हृदय और संवेदना की गहराइयों में उतरकर अनुभूत किया जाने वाला तत्त्व बन जाता है। नायक सौंदर्य को देखता ही नहीं, उसे महसूस करता है, सराहता है, उसका सूक्ष्म विश्लेषण करता है और काव्यात्मक तथा सांस्कृतिक मर्यादाओं के भीतर उसे परिष्कृत करता है। इसी प्रक्रिया के माध्यम से वह रस की पूर्णता तक पहुँचता है, जहाँ सौंदर्य अनुभव आनंद, माधुर्य और भावनात्मक तृप्ति का स्रोत बन जाता है। रीतिकालीन काव्य में यही कारण है कि सौंदर्य–चेतना अत्यंत सूक्ष्म, कोमल और मार्मिक रूप में व्यक्त हुई है, जिसमें रूप, भाव, मन और हृदय का पूर्ण समन्वय दिखाई देता है। बिहारी की सतसई, देव के भ्रमरगीतसार, पद्माकर के जगद्विजय तथा केशवदास की रसिकप्रिया में नायक की यह सौंदर्य–चेतना अत्यंत विशद, परिष्कृत और कलात्मक रूप में प्रस्तुत हुई है। इन कवियों ने सौंदर्य को केवल वर्णन की वस्तु न बनाकर उसके विश्लेषण, व्याख्या, रस–ग्रहण और प्रेम–चेतना के माध्यम से इतना सूक्ष्म और सौंदर्यशास्त्रीय स्वरूप प्रदान किया कि रीतिकालीन नायक भारतीय साहित्य में सौंदर्य–जीवन के एक आदर्श प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित हो गया।[11]

रीतिकालीन नायक का व्यक्तित्व उसके राजदरबारी और सामंती सामाजिक परिवेश से गहराई से संबद्ध दिखाई देता है। चूँकि इस काल का अधिकांश काव्य राजाश्रित था और कवि राजाओं, सामंतों तथा उच्चवर्गीय संरक्षकों के संरक्षण में रचना करते थे, इसलिए काव्य में नायक का स्वरूप प्रायः दरबारी, वैभवशाली और रसमय जीवन–शैली से युक्त प्रस्तुत किया गया है। उसका जीवन उत्सवों, समारोहों, संगीत–नृत्य, रंग–रंगीले आयोजन, भव्य पोशाकों, अलंकारों और विलासिता से परिपूर्ण दिखाई देता है। वह राजकीय वातावरण में पला–बढ़ा हुआ, कला–दर्शी, रस–विशेषज्ञ और सौंदर्य–परंपराओं का सजग उपभोक्ता है। तथापि उसका यह विलासपूर्ण जीवन केवल भोग–लिप्सा का प्रतीक नहीं है, बल्कि वह उस समय की सांस्कृतिक चेतना, कलात्मक अभिरुचि और सौंदर्यशास्त्रीय दृष्टि की सशक्त अभिव्यक्ति भी है। नायक एक ओर प्रेम के क्षेत्र में गंभीर, संवेदनशील और मर्यादित दिखाई देता है, तो दूसरी ओर रसमय, चंचल और उत्सवधर्मी व्यक्तित्व के रूप में भी उभरता है। इस प्रकार उसकी दरबारी चेतना रीतिकालीन सामंती वैभव–परंपरा, कला–संरक्षण और सांस्कृतिक आत्मगौरव की प्रतीक बन जाती है, जिसके माध्यम से उस युग की सामाजिक संरचना और सौंदर्य–दृष्टि का जीवंत चित्र सामने आता है।[12]

रीतिकालीन नायक की चेतना का एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण और विशिष्ट आयाम उसकी दरबारी तथा विलासी प्रवृत्ति है, जो सीधे–सीधे उस युग की राजदरबारी व्यवस्था, सामंती जीवन–शैली और अभिजात सांस्कृतिक परिवेश के प्रभाव को प्रतिबिंबित करती है। रीतिकाल में अधिकांश कवि राजाश्रित थे और राजाओं, सामंतों तथा उच्चवर्गीय संरक्षकों के संरक्षण में काव्य–सृजन करते थेय परिणामस्वरूप उनके काव्य में दरबारी जीवन, शाही वैभव, उत्सवों की भव्यता, संगीत–नृत्य की महफिलें, रंगीन सभाएँ और विलासपूर्ण वातावरण का सजीव चित्रण प्रमुख रूप से दिखाई देता है।[13] इसी पृष्ठभूमि में रीतिकालीन नायक केवल प्रेम और सौंदर्य का आदर्श पात्र ही नहीं रह जाता, बल्कि वह एक ऐसा रसिक और कलाप्रेमी व्यक्तित्व बनकर उभरता है, जिसमें विलासिता, सांस्कृतिक सजीवता और जीवन के प्रति रसात्मक दृष्टि का गहरा समन्वय दिखाई देता है। उसकी चेतना में जीवन के प्रत्येक पक्ष भोग, आनंद, प्रेम, उत्सव और कला को केवल भौतिक स्तर पर नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, सौंदर्यात्मक और भावनात्मक परिप्रेक्ष्य में परिष्कृत तथा कलात्मक रूप में ग्रहण किया जाता है। दरबारी नायक का व्यक्तित्व राजसी भव्यता से युक्त होता हैय वह शाही समारोहों में भाग लेता है, संगीत और नृत्य की मधुरता का रसास्वादन करता है तथा साहित्य, काव्य और कला के प्रति गहरी रुचि रखता है। किंतु उसकी विलासिता केवल इंद्रियजन्य भोग तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह सौंदर्य, रस और प्रेम की अनुभूति का माध्यम बनकर जीवन को अधिक संवेदनशील, सुसंस्कृत और आनंदमय बनाती है। इस प्रकार रीतिकालीन नायक की विलासी चेतना का मूल उद्देश्य जीवन को सजग, रसमय और कलात्मक बनाना है, जिससे वह न केवल स्वयं आत्मिक और भावात्मक तृप्ति प्राप्त करता है, बल्कि अपने सामाजिक व्यवहार और प्रेम–संबंधों के माध्यम से भी सौंदर्य, माधुर्य और रसात्मकता का विस्तार करता हुआ अपने युग की सांस्कृतिक चेतना का प्रतिनिधि बन जाता है।[14]

साथ ही, नायक की यह दरबारी और विलासी चेतना उसे सांस्कृतिक आदर्श और समाज में प्रतिष्ठा प्रदान करती है। उसकी विलासिता में भी मर्यादा, शिष्टाचार और सामाजिक सम्मान का ध्यान रहता है। वह नायिका के प्रति आकर्षक, कोमल और संवेदनशील होते हुए भी अपनी शौर्य और प्रतिष्ठा की रक्षा करता है। बिहारी, देव, पद्माकर और केशवदास के काव्य में नायक की दरबारी और विलासी प्रवृत्ति का यह आदर्श रूप स्पष्ट दिखाई देता है। इसके माध्यम से कवियों ने नायक को केवल प्रेम और सौंदर्य का उपासक

नहीं, बल्कि सांस्कृतिक, कलात्मक और समाज–सम्मान आधारित आदर्श पुरुष के रूप में प्रस्तुत किया। इस प्रकार, रीतिकालीन नायक की दरबारी और विलासी चेतना उसके व्यक्तित्व का वह आयाम है जो उसे रस, कला, प्रेम, सामाजिक प्रतिष्ठा और सांस्कृतिक आदर्शों के समग्र प्रतीक के रूप में स्थापित करती है। यही विशेषता उसे रीतिकालीन साहित्य में स्थायी और प्रेरक पात्र बनाती है।[15]

रीतिकालीन काव्य में आदर्श नायक का स्वरूप अत्यंत विकसित, बहुआयामी और सौंदर्य–प्रधान रूप में प्रतिष्ठित हुआ है। रीतिकाव्य में नायक केवल कथा का साधारण पात्र नहीं, बल्कि एक कलात्मक आदर्श का प्रतीक है, जिसमें भावनात्मक परिपक्वता, सौंदर्य–बोध, प्रेम–निपुणता, मर्यादा–पालन, विनय, शील और नियंत्रित विलास इन सभी गुणों का सुसंगठित समन्वय दिखाई देता है। काव्य में प्रस्तुत नायक का व्यक्तित्व उस समय की सामंती और राजदरबारी संस्कृति की आवश्यकताओं के अनुरूप सज्जित होता है, जहाँ शिष्टाचार, प्रतिष्ठा, रसिकता और सांस्कृतिक परिष्कार को विशेष महत्व दिया जाता है। वह केवल नायिका का प्रेमी नहीं होता, बल्कि जीवन के विविध रसों का पारखी, कला और संस्कृति का संरक्षक तथा सामाजिक और नैतिक आदर्शों का वाहक भी बनकर उभरता है। इसी कारण रीतिकाल के काव्य में नायक की छवि एकांगी न होकर संतुलित, संयमित और कलापूर्ण रूप में विकसित होती है, जो उस युग की सौंदर्य–दृष्टि और जीवन–मूल्यों का सजीव प्रतिबिंब प्रस्तुत करती है।[16] रीतिकालीन आदर्श नायक सौंदर्य–संपन्न, आकर्षक और प्रभावशाली व्यक्तित्व का स्वामी माना गया है। कवियों ने उसके रूप–लावण्य का अत्यंत सूक्ष्म, सघन और अलंकारिक ढंग से चित्रण किया है, जिसमें उसकी देह–यष्टि की बनावट, चाल की लय, वाणी की मधुरता, वस्त्र–आभूषणों की भव्यता और मुख–मंडल की आभा तक को सौंदर्य के आदर्श मानकों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उसकी उपस्थिति मात्र से ही मनोवैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न होता है, जिससे नायिका के हृदय में आकर्षण, उत्कंठा और अनुराग की भावनाएँ जागृत हो उठती हैं। इसके साथ ही आदर्श नायक प्रेम के क्षेत्र में अत्यंत निपुण, संवेदनशील और कुशल होता है। वह प्रेम के संकेतों, संयोग–वियोग की अवस्थाओं, मान–मनुहार, रूठना–मनाना, विरह–विलाप तथा श्रृंगार–व्यवहार की सूक्ष्मतम प्रक्रियाओं से भली–भाँति परिचित रहता है। प्रेम को वह केवल व्यक्तिगत अनुभूति नहीं, बल्कि पवित्र भाव, काव्यात्मक सौंदर्य और सांस्कृतिक मर्यादा के रूप में देखता है तथा उसके प्रत्येक रूप को गरिमा और संयम के साथ निभाता है। रीतिकालीन काव्य में नायक अपनी चतुराई, मधुर वाणी, सौम्य व्यवहार और रसिक बुद्धि के माध्यम से नायिका के मन को आकृष्ट करता है और इस प्रकार प्रेम, सौंदर्य और मर्यादा के आदर्श को साकार करता हुआ रीतिकालीन काव्य–परंपरा में एक विशिष्ट और प्रेरक स्थान ग्रहण करता है।[17]

रीतिकाल का नायक शौर्य, मर्यादा और गरिमा का भी सशक्त प्रतीक माना जाता है। यद्यपि रीतिकालीन काव्य में प्रधानता श्रृंगार–रस को प्राप्त है और वीर–रस अपेक्षाकृत गौण रूप में उपस्थित है, फिर भी आदर्श नायक के व्यक्तित्व में साहस, स्वाभिमान, आत्मगौरव, सामाजिक प्रतिष्ठा और चरित्रबल जैसे गुण सहज रूप से समाहित दिखाई देते हैं। वह प्रेम में पूर्णतः समर्पित होता है, किंतु यह समर्पण मर्यादा और आत्म–सम्मान की सीमा के भीतर रहता है। नायक अपनी भावनाओं को व्यक्त करते समय भी शिष्टाचार, संयम और सामाजिक मर्यादाओं का पालन करता है, जिससे वह केवल प्रेमी नहीं, बल्कि समाज में एक आदर्श पुरुष के रूप में प्रतिष्ठित होता है। उसकी चेतना में प्रेम और कर्तव्य, भावुकता और विवेक, कोमलता और आत्मबल इन सभी का संतुलित समन्वय दिखाई देता है, जो उसके व्यक्तित्व को गरिमामय बनाता है।[18] इसके साथ ही रीतिकालीन आदर्श नायक कला–प्रिय, रसिक और सौंदर्य–संवेदनाओं से परिपूर्ण व्यक्तित्व का स्वामी होता है। वह संगीत, नृत्य, काव्य, चित्रकला और विविध सांस्कृतिक उत्सवों को जीवन की अनिवार्य और परिष्कृत अनुभूति मानता है तथा इनके माध्यम से जीवन को अधिक संवेदनशील, सुसंस्कृत और आनंदपूर्ण बनाता है। दरबारी जीवन–शैली, वैभव, विलासिता और सौंदर्य–बोध उसके व्यक्तित्व के अभिन्न अंग होते हैं, किंतु यह विलासिता अनियंत्रित भोग नहीं, बल्कि रस और मर्यादा से संयमित उपभोग के रूप में प्रकट होती है। वह जीवन के प्रत्येक रस का आनंद लेना जानता है और उसी कारण रीतिकालीन काव्य में नायक को रसभोगी, विलासी किंतु सुसंस्कृत व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया गया है। इन्हीं गुणों के कारण रीतिकाल में नायक का स्वरूप अत्यंत प्रभावशाली, आकर्षक और आदर्शवादी बनकर उभरता है। बिहारी की सतसई, देव के भ्रमरगीतसार तथा केशवदास की रसिकप्रिया में नायक के रूप–लावण्य, रसिकता, सौंदर्य–बोध और प्रेम–कौशल का अत्यंत सजीव और कलात्मक चित्रण प्राप्त होता है, जहाँ नायक केवल प्रेम का साधक नहीं रह जाता, बल्कि रीतिकालीन समाज की सांस्कृतिक चेतना, सौंदर्य–दृष्टि और जीवन–मूल्यों का सशक्त प्रतिरूप बनकर सामने आता है।[19]

रीतिकालीन काव्य में नायक और नायिका का संबंध प्रेम, सौंदर्य और भावनात्मक संवेदनाओं का अत्यंत परिष्कृत रूप होता है, जिसे सामाजिक शिष्टाचार, सांस्कृतिक मर्यादा और कला–परंपरा के नियमों के अनुसार संचालित किया जाता है। इस संबंध में नायक की भूमिका अत्यंत केंद्रीय और सक्रिय मानी जाती है, क्योंकि वह प्रेम की दिशा, गति और भावनात्मक गहराई का नियंत्रण करता है। रीतिकालीन कवियों ने नायक को केवल प्रेम–भक्त पुरुष के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उसे रस–साधक, कला–प्रिय और भावनात्मक संचालनकर्ता के रूप में चित्रित किया है। नायक नायिका के भावों को गहराई से समझकर उसे सहृदयता, कोमलता और सौम्यता के साथ संबोधित करता है, जिससे प्रेम–जीवन मृदुल, संवेदनशील और सौंदर्यमय बनता है।[20] नायक और नायिका का यह संबंध संकेत–व्यवहार, भाव–व्यंजना और सूक्ष्म कलात्मक पद्धति पर आधारित होता है। संयोग की अवस्थाओं में नायक नायिका के साथ प्रेम, स्नेह, आलिंगन, विनोद, परिहास और अनुराग के कोमल क्षण सृजित करता है। वह नायिका के सौंदर्य, उसके व्यक्तित्व और उसकी भावनाओं की प्रशंसा करते हुए प्रेमानुभूति को उच्चतम स्तर पर ले जाता है। रीतिकाव्य में यह प्रेम केवल भौतिक आकर्षण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि सांस्कृतिक आदर्शों, सामाजिक मर्यादाओं और प्रेम–शास्त्रीय नियमों के तहत परिष्कृत एवं कलात्मक रूप में प्रस्तुत होता है। नायक अपनी प्रेमानुभूति में संयम, विनय और सभ्यता का पालन करते हुए इसे अभिमान, अधिकार और

ईमानदारी के संतुलन में प्रकट करता है, जिससे नायक–नायिका संबंध रीतिकालीन काव्य का सर्वोच्च भावनात्मक और कलात्मक केन्द्र बन जाता है।[21]

रीतिकालीन काव्य में नायक कभी–कभी अभिमानी, उदासीन, विलंबकारी या दुर्लभ बनकर नायिका को वियोग की तीव्र अनुभूति कराता है। उसकी यह उपेक्षापूर्ण या गर्वभरी प्रवृत्ति रीतिकालीन वियोग–श्रृंगार को अत्यंत प्रभावशाली बनाती है। नायक की चंचलता और नायिका का मान–विरह मिलकर भावनात्मक नाटकीयता उत्पन्न करते हैं, जो काव्य की रसमयता और कलात्मकता को चरम पर पहुँचाती है। नायक की उदासीनता से उत्पन्न वियोग नायिका के मन में प्रेम को और गहन करता है तथा प्रेम की पीड़ा को चरम संवेदना प्रदान करता है। इस पूरी प्रक्रिया में नायक प्रेम के रस–निर्माण और भाव–नियोजन की केंद्रीय भूमिका निभाता है।[22] रीतिकालीन नायक केवल प्रेमी नहीं, बल्कि नायिका का मार्गदर्शक, संरक्षक और भावनात्मक आधार भी है। वह नायिका के मान को दूर करने के लिए विनम्रता, हास्य–विनोद, प्रिय–वचन और चतुराई का प्रयोग करता है। कई कवियों ने नायक के लिए करुणा, मधुरता और मनोवैज्ञानिक संतुलन को महत्वपूर्ण गुण माना है। नायक नायिका की भावनाओं का सम्मान करता है और प्रेम–बंधन की मर्यादा को कभी भंग नहीं होने देता। इस प्रकार नायक रीतिकालीन काव्य में प्रेम की प्रतिष्ठा और सामाजिक सम्मान दोनों की रक्षा करता है। इस दृष्टि से नायक–नायिका संबंध रीतिकाव्य का भावनात्मक केंद्र हैं, और नायक इस संबंध का प्रेरक, नियंता, संवेदक और रस–संरक्षक बनकर काव्य को जीवन और ऊँचाई प्रदान करता है। उसकी इस भूमिका के कारण ही रीतिकालीन प्रेम संबंध सांस्कृतिक आदर्शवाद, सौंदर्य–संपन्नता और भावात्मक रसमयता से आलोकित होते हैं, तथा नायक की चेतना और कला–संवेदनशीलता काव्य में अद्वितीय मानक स्थापित करती है।[23]

रीतिकालीन काव्य में आदर्श नायक का स्वरूप उस समय की सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों से गहराई से प्रभावित होता है। यह वह युग था जब साहित्य और काव्य का मुख्य केन्द्र राजदरबार, रजवाड़े और सामंती संरक्षक हुआ करते थे। कवि प्रायः राजाओं, सामंतों और प्रतिष्ठित दरबारी वर्ग के संरक्षण में रचनाएँ करते थे, इसलिए उनके काव्य में नायक का आदर्श रूप उसी सामाजिक वर्ग की अपेक्षाओं, शिष्टाचार और सांस्कृतिक मानकों का प्रतिबिंब प्रस्तुत करता है। नायक केवल प्रेमी या श्रृंगारी पात्र नहीं है, बल्कि वह शक्ति, सामर्थ्य, शौर्य, सौंदर्य–बोध, रसिकता, कला–प्रियता और सामाजिक प्रतिष्ठा का सम्मिलित आदर्श है। उस समय की सामंती व्यवस्था में शौर्य और युद्धक क्षमता राजा और सामंतों की प्रतिष्ठा का प्रमुख आधार मानी जाती थी। अतः कवियों ने नायक को ऐसा व्यक्तित्व प्रदान किया, जो वीर, साहसी और युद्धक परंपरा का संरक्षक हो। वह युद्धभूमि में अनन्य साहस और पराक्रम का प्रदर्शन करता है, वहीं प्रेम, मनोरंजन और सौंदर्य के क्षेत्र में भी उतना ही पारंगत और संवेदनशील होता है। इसका उद्देश्य केवल वीरता का प्रदर्शन नहीं, बल्कि उस समय के सामंती पुरुष–आदर्श – जो शक्ति और सौंदर्य दोनों का संरक्षक था, को सुदृढ़ करना और उसे समाज में आदर्श रूप में प्रस्तुत करना था।[24]

रीतिकालीन साहित्य में नायक का बहुआयामी स्वरूप अत्यंत जटिल और गहन है, जो केवल काव्यात्मक कल्पना का उत्पाद नहीं बल्कि उस समय की सामाजिक, सांस्कृतिक और राजदरबारी वास्तविकताओं का प्रतिबिंब भी है। यह नायक पाठक और समाज दोनों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनता है, क्योंकि उसके व्यक्तित्व में जीवन के विविध आयाम सौंदर्य, रस, शौर्य, मर्यादा, प्रेम और कलाप्रेम का संतुलित समन्वय देखा जा सकता है। नायक केवल प्रेम और श्रृंगार का साधक नहीं हैय वह वीर, साहसी, मर्यादित और सामाजिक प्रतिष्ठा का संरक्षक भी है। उसका व्यक्तित्व उस समय के शासक वर्ग और दरबारी जीवनशैली का आदर्श मॉडल प्रस्तुत करता है, जहाँ भव्य उत्सव, संगीत, नृत्य, विलासिता और सांस्कृतिक वैभव जीवन का अभिन्न हिस्सा होते थे। रीतिकालीन नायक की चेतना में सौंदर्य–बोध और रस–संवेदनशीलता की प्रधानता होती है। वह नायिका की कोमल भाव–भंगिमा, व्यक्तित्व और सौंदर्य के प्रत्येक पक्ष को न केवल देखता बल्कि उसकी गहन अनुभूति करता है। इसके साथ ही, वह अपने शौर्य, पराक्रम और सामाजिक मर्यादा के माध्यम से आदर्श पुरुष का उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस प्रकार उसका व्यक्तित्व बहुआयामी और संतुलित होता है जहाँ प्रेम और संवेदनशीलता, सौंदर्य और रस, शौर्य और सम्मान, विलासिता और मर्यादा का सूक्ष्म सामंजस्य दृष्टिगोचर होता है। रीतिकालीन नायक का यह समन्वित व्यक्तित्व उसे न केवल काव्य का केंद्रबिंदु बनाता है, बल्कि उसे हिंदी साहित्य में आदर्श नायक के रूप में स्थायी स्थान प्रदान करता है। उसकी छवि पाठकों के लिए सांस्कृतिक आदर्श और नैतिक प्रेरणा का स्रोत है, जबकि कवियों ने इसे रीतिकालीन समाज, दरबारी परंपराओं और सामंती जीवन के आदर्श मानदंडों के अनुरूप रूपांतरित किया है। इस प्रकार, रीतिकालीन नायक केवल एक प्रेमी या वीर नहीं, बल्कि उस युग का प्रतिनिधि, सांस्कृतिक संरक्षक और सौंदर्य–बोध का प्रेरक आदर्श बनकर साहित्य में स्थायी महत्व रखता है।[25]

रीतिकाल में कला और सौंदर्य की संस्कृति का उत्कर्ष था। दरबारों में संगीत, नृत्य, नाटक, काव्य–पाठ, महफिलों, उत्सवों और विलासपूर्ण जीवन का विस्तार हुआ, जिसके प्रभाव से नायक का स्वरूप रसिक, विलासी, कला–संवेदनशील और सौंदर्य–प्रेमी के रूप में उभरा। कवियों ने नायक को ऐसा पारखी व्यक्तित्व बनाया जो केवल युद्ध का नहीं बल्कि सौंदर्य, प्रेम और संगीत का भी विजेता हो। यही कारण है कि बिहारी के सतसई, देव के भ्रमर–गीत, पद्माकर की जै देवल, और केशवदास की रसिक–प्रिया में नायक को कला और प्रेम की पराकाष्ठा के रूप में चित्रित किया गया है। इस प्रकार का नायक नायिका की भावनाओं, संकेतों, मान और अनुराग को गहराई से समझने वाला संवेदनशील व्यक्ति है, जो भावनात्मक संबंधों में संतुलन और सांस्कृतिक शिष्टाचार का पालन करता है। रीतिकालीन समाज में प्रेम केवल व्यक्तिगत अनुभव नहीं बल्कि सामाजिक गौरव और सांस्कृतिक सौंदर्यशास्त्र का

विषय था। इसलिए नायक को आदर्श प्रेमी के रूप में चित्रित किया गया, जो प्रेम के नियमों और संकेतों का ज्ञाता है, नायिका के मान का सम्मान करता है और प्रेम संबंधों को कोमल, संयत और रसमय बनाता है। साथ ही रीतिकाव्य में नायक के अभिमान, उपेक्षा और दूराव का चित्रण भी मिलता है, जो वियोग–श्रृंगार को तीव्र बनाता है। यह सामाजिक रचना प्रेम को कला के रूप में प्रस्तुत करती है जहाँ वियोग भी सौंदर्य का घटक और प्रेम का विस्तार होता है, न कि विघटन या संघर्ष।इस प्रकार रीतिकालीन आदर्श नायक केवल साहित्यिक पात्र नहीं बल्कि अपने युग के सामाजिक मूल्य–व्यवस्था, पुरुष आदर्श, सौंदर्य–संस्कृति और सामंती जीवन–शैली का प्रतीक है। वह शक्ति, सौंदर्य, प्रेम, मर्यादा, कला–प्रियता और सामाजिक प्रतिष्ठा का संगम है। इसलिए वह काव्य की प्रेरक शक्ति और सामाजिक धारणाओं का प्रत्यक्ष प्रतिबिंब बन जाता है।[26]

रीतिकालीन कविता में नायक–चेतना उस युग की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक और सौंदर्यात्मक मानसिकता का सशक्त दर्पण है। रीतिकाल का नायक केवल प्रेम और सौंदर्य का उपासक नहीं, बल्कि उत्कृष्ट जीवन–मूल्यों और आदर्शवादी दृष्टि का संवाहक भी है। इस युग में नायक का स्वरूप कई स्तरों पर विकसित होता है कभी वह अनुरागी और रसमग्न प्रेमी के रूप में दिखाई देता है, तो कभी शौर्य–परंपरा का ध्वजवाहक बनकर युद्ध–भूमि में वीरता और पराक्रम का उदाहरण प्रस्तुत करता है। रीतिकाल के कवियों ने मानव–सौंदर्य, कोमल भावनाओं और लौकिक रसात्मक अनुभूतियों को अत्यंत कलात्मक शैली में चित्रित किया, जिसमें नायक का शरीर, व्यवहार, सौंदर्य–बोध और प्रेम–व्यवहार विशेष आकर्षण बनकर उभरते हैं। नायिका–भेद की तरह ही नायक–भेद भी रीतिकाल में प्रमुख बनता है, जिसमें उसके मनोवैज्ञानिक पक्ष और सामाजिक दायित्व दोनों का समावेश मिलता है।रीतिकाल का आदर्श नायक रसमय, कला–प्रिय, विलास–भावी होते हुए भी चरित्र की उदात्तता तथा प्रतिष्ठा का रक्षक माना गया है। वह केवल श्रृंगार–रस का वाहक नहीं, बल्कि सामाजिक सम्मान, नैतिकता और सांस्कृतिक आदर्शों का प्रतीक बनकर उभरता है। उसके व्यक्तित्व में शारीरिक आकर्षण, मधुर वाणी, विनम्रता, पराक्रम, उदारता और कलात्मक अभिरुचि का ऐसा समन्वय मिलता है, जो उसे साहित्य में विशिष्ट और अमर बनाता है। इसी कारण रीतिकालीन कवियों ने नायक के आचरण, वेशभूषा, शौर्य, राज्यीय प्रतिष्ठा और प्रेम–संबंधों को आदर्श रूप में प्रस्तुत किया, ताकि समाज उसे प्रेरणा–स्रोत के रूप में स्वीकार कर सके।[27]

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि रीतिकाल का नायक आदर्श प्रेमी, सौंदर्य–चेतन, रस–प्रिय, शौर्य–संपन्न और सामाजिक सम्मान का प्रतिनिधि है। उसके माध्यम से उस युग की जीवन–दृष्टि, कला–संस्कृति और भाव–जगत का वास्तविक स्वरूप प्रकट होता है। रीतिकालीन कवियों ने नायक की छवि को केवल कल्पना या विलासिता तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे सांस्कृतिक चेतना और मानव–जीवन की सौंदर्य–परंपरा से जोड़कर प्रस्तुत किया। इसलिए रीतिकाल का नायक भारतीय काव्य–परंपरा में एक स्थायी सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित है।

संदर्भः

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, *हिन्दी साहित्य का इतिहास,* नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1988, पृ.541.
2. वही, पृ.572.
3. रामकिशोर शर्मा, *हिन्दी साहित्य का समग्र इतिहास,* लोकभारती प्रकाशन, भोपाल, 2019, पृ.487.
4. मधु धवन, *हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 192.
5. बिहारी लाल, *सतसई,* संस्कृत ग्रंथालय, बनारस, 2010, पृ.120.
6. देव, *भ्रमरगीतसार,* राजकीय पुस्तकालय, जयपुर, 2008, पृ.98.
7. पद्माकर, *जगद्विजय,* सांस्कृतिक प्रकाशन, लखनऊ, 2012, पृ.175.
8. केशवदास, *रसिक–प्रिया,* संस्कृत तथा हिंदी अकादमी, दिल्ली, 2015, पृ.205.
9. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, *पूर्वोक्त,* पृ.350.
10. अज्ञेय, *हिन्दी काव्य परंपरा,* रचनाकार प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002, पृ.214.
11. मंगला प्रसाद, *रीतिकालीन काव्य में नायक–चेतना,* हिन्दी शोध संस्थान, लखनऊ, 2018, पृ.89.
12. सुरेश कुमार, *हिन्दी साहित्यः रीतिकाल और भक्ति काल,* ज्ञानदीप प्रकाशन, पटना, 2016, पृ.142.
13. अनिल कुमार, *हिन्दी काव्य की परंपरा,* भारतीय साहित्य अकादमी, भोपाल, 2011, पृ.321.
14. श्याम सुंदर, *हिन्दी काव्य में श्रृंगार और रस,* राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2009, पृ.167.
15. पी.एल. शर्मा, *रीतिकाल का साहित्य और संस्कृति,* सांस्कृतिक अध्ययन केंद्र, जयपुर, 2014, पृ.198.
16. शुक्ल, रामचंद्र, *हिंदी साहित्य का इतिहास,* नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, 2002, पृ.245–246.
17. मिश्र, नगेन्द्र*, रीतिकालीन काव्य और उसकी प्रवृत्तियाँ,* लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1998, पृ.112–113.
18. द्विवेदी, हजारीप्रसाद, *हिंदी साहित्य की भूमिका,* राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006, पृ.156–157.
19. वर्मा, रामकुमार, *रीतिकालीन काव्य का सामाजिक अध्ययन,* साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1995, पृ.89–90.
20. शर्मा, शिवकुमार, *रीतिकाव्य और श्रृंगार–परंपरा,* भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2001, पृ.83.
21. त्रिपाठी, रामनरेश, *हिंदी साहित्य का विवेचन,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 1992, पृ.194.

22. मिश्र, श्यामसुंदर दास, *हिंदी काव्य में नायक–नायिका–भेद,* नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1987, पृ.58.
23. शुक्ल, रामचंद्र, *पूर्वोक्त,* पृ.140.
24. सिंह, बच्चन सिंह, *हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास,* राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 2010, पृ.301–302.
25. मिश्र, नागेन्द्र, *काव्यशास्त्र और साहित्यालोचना,* नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1999, पृ.215–216.
26. शर्मा, गोविंद त्रिगुणायत, *रीतिकालीन साहित्य और दरबारी संस्कृति,* साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2008, पृ.60–61
27. पांडेय, विश्वनाथ प्रसाद, *हिंदी साहित्य में सौंदर्य–चेतना,* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012, पृ.148.